...त नहीं पाया हूँ

रमेशकुमार त्रिपाठी

उमेश प्रकाशन
१००

भूल नही पाया हूँ (कविता–सग्रह)

BHOOL NAHIN PAYA HUN (Poems)

Rs. 100.00

प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, 100 लूकरगज, इलाहाबाद – 1
संस्करण : प्रथम 2000 © लेखक
लेसर कम्पोजिंग : अनुप्रवेश कम्प्यूटर्स, 38 डी लूकरगंज, इलाहाबाद
मुद्रक : केशव प्रकाशन, इलाहाबाद
मूल्य : रुपये एक सौ मात्र

श्रद्धेय दादू
(स्वर्गीय) श्री गयाप्रसाद त्रिपाठी को

कविता-क्रम

❑❑

कूदकर

कूदकर
हम पहुँच सकते
इस जगह से
उस जगह पर,
कूदकर क्या
पहुँच सकते
दु खद पल से
सुखद पल पर ?

जब-जब हुआ

पक्षियों के
तेज स्वर
मन्द स्वर
अति मन्द स्वर,
माधुर्य सगीत व
उन स्वरो का,
मैं जान पाया
भोग पाया
जब—जब हुआ
सहज समाधि मे।

मुस्कान

गॅवई यह
गरीब लडका
दूर अपने
माँ–बाप से
नौकर है
शहर मे
एक धनी के
घर में।

चकित हुआ करता हूँ मैं
देखकर मुस्कान अकसर
सलोने–से
चेहरे पे इसके !

तुम्हारे पीछे

नाते–रिश्ते
भूल गया था,
बीवी–बच्चे
भूल गया था,
अपने को भी
भूल गया था
तुम्हारे पीछे

इच्छा

इच्छा
पूरी हुई,
खुशी हुई।
लेकिन,
जाते खुशी
क्या देरी हुई ?
फिर हम
रीते हुए
दूसरी इच्छा मे फॅसकर।

कल्पना

निराशा मे
डूबे हुए को
कल्पना ने
दे दिया
इक खिलौना
खेलने को
कुछ पलों को।

प्रदूषण

दोस्त के घर
गया था पहली बार।
उसके घर के बाहर
सुबह उठा जब सोकर,
चौंका देखकर बिस्तर पर
कोयले के कण।
बिजलीघर था पास।

सुन्दरता : दो रूप

किसी की सुन्दरता
चाहत के बिना
होती है कैसी !
उसी की सुन्दरता
चाहत के साथ
होती है कैसी !

गलत कितने

हैरान हैं हम –
लोग कितने
गलत कितने ;
किन्तु हम
हैरान कितने
कि स्वयं हम
गलत कितने ।

उस दिन

उस दिन
तुमने मेरी
गीत रचकर
स्तुति की थी,
उस दिन
तुमने मेरी
मधु शब्दो से
खातिर की थी,
उस दिन
तुमने मेरी
भाव–पगी
विदाई की थी।

वे सभी बाते
अब मुझे काटतीं,
तुम्हारी एक बात के
कट जाने से।

•

कर्त्तव्य

कर्त्तव्य
ठीक से
नहीं करने से
लगा करता है
क्या है अर्थ
हमारे होने का,
क्या है उपयोगिता हमारी,
कचोटता रहता है दिल,
कोसता रहता है खुद को।

याद आये

दी आशा हमे,
तुम याद आये।
दी निराशा हमे,
तुम याद आये।
पर उस समय तुम,
कैसे याद आये।
औ' इस समय तुम,
कैसे याद आये।

पुरस्कार

वे न जाने
क्या–क्या
भूल गये,
उन्होने न जाने
क्या–क्या
कर डाला,
पुरस्कार की
चाहत मे ।

गुड

उन्होने
हिन्दी पत्रिका में
एक लेख पढा
जो उन्हे
बहुत जॅचा।
लेख के
शीर्षक के सामने
लिखा उन्होंने
'गुड' ।

पुरस्कार

पुरस्कार पाने की
आशा बढते
मन उनका
होता गया
शुक्ल पक्ष।
पुरस्कार पाने की
आशा घटते
मन उनका
होता गया
कृष्ण पक्ष।

आसरा

नभ से आग
बरस रही है,
लेकिन नभचर
चहक रहे हैं,
क्योंकि
उन्हें मिला है आसरा
पाकड़ के
विशाल, हरे-भरे वृक्ष का।

रिश्ता

मेरे बचपन में
गॉव के बाहर
थे आम के बाग–ही–बाग।

उन्हीं बागों में से
एक बाग के छोर में
तब बसी थी एक तलैया,
जिसके किनारे
तब बसता था
मिठुवा आम का पुराना पेड़।

तलैया मे सडते होते
पडोसी मिठुवा के पत्ते।

कभी–कभी,
निपट एकान्त में
वहॉ खडा मैं बालक
सूॅघता होता
मनपसन्द वह सडॉध,
और, न जाने क्या–क्या
देखता होता,
सुनता होता,
महसूसता होता।

कभी–कभी,
तलैया के कूल
करते शौच
न जाने क्या–क्या
मेरा बालक–मन
करता होता।

लुभाती हमको

मुखर तुम्हारी
विशाल आँखे,
श्याम तुम्हारे
कामुक होठ,
मुखरित मुद्रायें
श्यामल मुख की,
और तुम्हारी
मंजुल वाणी,
ये सब रही
लुभाती हमको।

लेकिन आज भी

सुबह है
इतवार की।
पसरा पडा हूँ
बिछौने पर।
लेकिन आज भी
आयी महरी
काम पर
समय से !

खुद ही

जिससे
अलग होने की कल्पना
कभी कॅपा देती थी हमे,
उसीसे
अपने को
किया अलग
खुद ही।

बुद्धू

जब—जब
दॉव फॅसे
लोगो के,
मैंने उनको
नहीं भुनाया।
मैं रहा सर्वदा
बुद्धू !

निश्चिन्त

बैठा हूँ,
लगता है
बैठा हूँ निश्चिन्त,
खुद भी लगता है
बैठा हूँ निश्चिन्त,
लेकिन,
कहाँ बैठा हूँ निश्चिन्त।

स्नेह-परवाह

उनसे जरा–सा
स्नेह पाकर
जरा–सी
परवाह पाकर
मन को भला
लगने लगा,
दिल था बहुत खाली –
कुछ भरा
लगने लगा,
अस्तित्व का एहसास
अतिरिक्त कुछ
होने लगा।

सम्मान

आपने
विद्वत्सभा मे
जब लिया
मेरा नाम
उठा
मेरा मन
किन्तु हुआ नत
मेरा आनन।

रेंड़ी के बीज

रेडी के बीज
कीमती, सुन्दर
ढूँढा करते थे
हम दीवाने बालक
अपने गॉव में
घूम–घूमकर
भरी दोपहर मे
जरा भी थके बिना
जुआ खेलने के लिए।

सच जी जाना

अचानक
करुणा से
विगलित हो जाना
आँखो में
आँसू आ जाना
और गले का
रुँध जाना
सच जी जाना।

दुर्घटना की खबर

दुर्घटना की खबर
होती अक्सर
खबर भर,
सिवाय इसके कि
जन्मती इससे
अनिष्ट की आशका
अपने लिए
अपनों के लिए।

खुशहाली-बदहाली

नहीं देता है ईश्वर
खुशहाली हमे
न ही देता है
बदहाली
फिर भी
उसी पर
मढ़ते हैं हम मूढ
अपनी खुशहाली
अपनी बदहाली।

उदास

जलता दीप
देखती रही एकटक
वह उदास,
जब मैंने कही
उससे
एक बात
उदास।

आस

सँजोयी आस
हुई जब भंग,
तो हम कुम्हलाये
ज्यों दोपहर में फूल;
लेकिन,
आस
हुई जब पूरी,
तो हम विहँसे
ज्यों प्रभात में फूल।

उपलब्धि

उपलब्धि से
सुमन–सा
हम खिल गये,
बुरे भी अच्छे
हमें लगने लगे,
बोलने का मन
स्वयं होने लगा।

मजदूर और आप

मजदूर
पत्थर जमीन पर
चला रहा फावडा।

सामने उसके
बैठे आप
सोच–सोचकर
हो रहे परेशान
कि अति धीमी गति से
हो रहा काम
और मैं
हो रहा विलम्बित!

मुहूर्त

मुहूर्त का मुँह
देखे बिना
कितने काम
मेरे बने ।
मुहूर्त का मुॅह
देखकर भी
कितने काम
मेरे बिगडे ।

मचल उठते थे

पेड़ में आम
दूर से देखे,
अच्छे लगे ;
लेकिन
उन्हें तोड़ने की
हुई न चाह।
मगर कभी
उन्हें देखते,
मचल उठते थे
तोड़ने को।

यूँ ही गया

किसी दिन
कुछ अच्छा घटा।
अगले उसी दिन
कुछ अच्छा घटने की
आशा बँधी।
किन्तु दिन वो
यूँ ही गया।

इनमें

नहीं कुछ
तारीख मे किसी,
नहीं कुछ
दिवस मे किसी,
इनमें हमीने
कुछ–कुछ
रख दिया है।

पहल

चॉद
बैसाख–पूर्णिमा का
देख रहे हैं,
सोच रहे हैं –
आज ही
जन्मे थे बुद्ध,
मरे भी थे,
आज ही
उनको मिला था ज्ञान।
लेकिन,
यह चॉद देखते रहने से
बुद्ध का कुछ भी भान
नहीं हो सकता,
न ही जरा भी
बन सकते हैं बुद्ध।
हॉ, आज
कुछ बुद्ध बनने की
कर सकते हैं पहल।

बीस पैसा

बच्चे के हाथ से
ट्रेन के डिब्बे मे
कहीं गिर गया
बीस पैसा।

बच्चे के बाप,
थे जो प्रोफेसर,
उठे और ढूँढने लगे
सिक्का,
ढूँढकर ही
बैठे अपनी जगह पर।

प्रोफेसर साहब को पढ़ाया था
उनकी गरीब माँ ने
दूसरो के घर कर काम।

पुनर्जन्म

सुकर्मी को प्राय
मिलता नहीं
सुफल जीवन में।
इससे पैदा
चिल्लपो उसकी
चुप करने को
लोगो ने दिया उसे
खिलौना पुनर्जन्म का।

जेठ का दिन

जेठ का दिन
विकट थी गरमी
शाम आते
आयी ऑधी
आसमान मे
छाये बादल
लगा कि बरसेंगे
गहराते शाम
छॅटे कुछ बादल
फिर बहने लगी
मीठी, ठण्डी हवा
दुलारते मन।
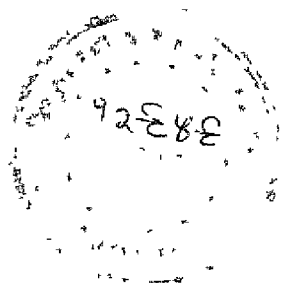
सिन्दूर

तुमने कभी
मेरी भरी मॉग में
भरा था सिन्दूर।
तब वह सिन्दूर
क्या था मुझको !
लेकिन आज
उसकी याद
क्या है मुझको !

नियति

अपनी भैंस के लिए
घास छीलना
नियति है
ग्वालिन की,
और उसका दूध पीना
नियति है
ग्राहक की ।

मन्दिर और राही

राह किनारे
थी एक कोठी,
जिसके अन्दर
था छोटा–सा मन्दिर
दिखता था जो
राह से।

उसी राह पर
चलते एक राही ने
देखा मन्दिर,
रुका वो,
उतारे झट चप्पल,
जोडे हाथ,
नवाया सिर
मूर्ति के प्रति ।

गुलमुहर के फूल

यह मन की
या मौसम की
या परिवेश की
या गुलमुहर की
है करामात
कि ये फूल
दिख रहे है
अत्यन्त कोमल ?

परिवर्तन

पहले जैसे
अब भी
होते है अनुभव,
पहले जैसे
अब भी
आते हैं विचार,
लेकिन,
पहले जैसे
अब नहीं जुडते हैं
उनसे हम।

बहुत डरता है

आदमी
ईश्वर से
बहुत डरता है,
क्योकि
अपनी कमजोरी
असुरक्षा
और मौत से
बहुत डरता है।

व्यक्तित्व

सहयोगी को देख
करते गलत काम
मन मेरा भी
होता विचलित
करने को गलत काम।
लेकिन फिर सोचता –
अगर सहयोगी की भाँति
मैं भी करूँ गलत काम,
तो फिर क्या
मेरा अपना व्यक्तित्व ।

जन्मभूमि

अपनी जन्मभूमि
और उससे जुडे
समीपवर्ती क्षेत्र मे
जिस मासूम रहस्य
और गौरवमयी अस्मिता की अनुभूति
हुआ करती थी हमे
थे जब हम किशोर
उसके समान अनुभूति
होती है अब भी हमे
वहॉ जाने पर
जबकि हम हैं प्रौढ।

पुराने साथी

पुराने साथी
बदल गये हैं।
बदल गये है
उनके तन–मन।
लेकिन मिलने पर
ढूॅढ़ते हैं अब भी
उनमें हम
वे ही तन–मन।

उदास होना

उदास होना,
उदासी को रोकने का
कोई प्रयास किये बिना
स्वाभाविक रूप में
उदास होना,
यह भी
एक अनुभव है,
पूर्ण अनुभव है,
जीवन का
एक सत्य है।

आन्तरिक आदेश

आदेश
अन्तरात्मा का
करने को करणीय
होता बार–बार
पर धीमा–धीमा।
टालना
या न मानना
इसका आदेश
किये रहता है
मन बेचैन।

परिवर्तन

क्वारी बहन
ब्याही बहन के बच्चो का
बडा ख्याल रखती।
वही बहन
विवाह के बाद
उन्ही बच्चो का
कितना ख्याल रखती !

मर गया था

जिस दिन
तुम्हारा डोला
चला था
पिया के घर,
उस दिन
हमारा दिल
मर गया था।

भेंट

ऐ दोस्त !
तुम सूख चले थे
मेरे दिल में,
ज्यों जेठ में तृण।
भेजी जो भेंट,
लहलहा उठे,
ज्यो सावन में तृण।

हमें करता है आकर्षित

हममे
कितना
आदिम
कितना
अतृप्त है।
इस सबकी पूर्ति मे
जो-जो
कहा, लिखा, दिखाया जाता है
वो-वो
सहज ही
हमे करता है आकर्षित।

बहुत दिनों से

बहुत दिनों से
मिला नहीं हूँ।
प्रिये !
इसीलिए क्या
दिखीं स्वप्न में तुम
कामुक
विरहिणी ?

एक गलत काम

तुम्हारी प्रतिमा
थी जो निर्मित
मेरे दिल में,
उसको कितनी क्षति पहुँचायी
तुम्हारे एक
गलत काम ने।
तुम क्या समझो,
समझना भी शायद
नहीं चाहती।

ईमानदारी

ईमानदारी
बडी ही ऊँची सीढ़ी है
जिसके एकदम ऊपर के पावदान
और एकदम नीचे के पावदान
नही दीख पडते,
दीख पडते है
केवल बीच के पावदान
जिन पर चढते–उतरते
दीख पडते है लोग।

छाप

तुम थी
साल अठारह की
मिले थे जब
तुमसे पहली बार ;
अब हो
साल बयालिस की,
पर समय ने
छोडी नहीं तुम पर छाप !

प्रेम

क्या बात है
तुममे, प्रिये!
पास आकर तुम्हारे
उतरते मेरे
सारे बुखार
और चढ़ता
बस तुम्हारा बुखार ?

एक दृश्य

डूबता सूरज
वन का किनारा
सुर्ख गुलमोहर
बगल में कुआँ
पास में छोटा टोला
टीले पर ढेले
ढेलों पर
नाचता मोर।

बदल गया है बहुत

शाम के वक्त
अपने गॉव के बाहर
मन की तरग में
खड़े हुए जब टीले पर,
हमारी आँखों मे
अनायास भर आये ऑसू
सोचकर
कि हमारे बचपन के
गॉव के बाहर का भौगोलिक परिवेश
बदल गया है बहुत।

टीला

कुछ दिन पहले तक
वहॉ था टीला
खडा याद में
वैभवशाली अतीत की।
हाय, बचा न
वह टीला भी।
लील गया है उसको
ईटो का भट्ठा।

प्राचीन ग्रामीण परिवेश

जब भी कभी
मिलता है
विचरने को
प्राचीन ग्रामीण परिवेश
गुजरा था जहाँ
जीवन का प्रभात
हो जाता है विह्वल मन
रेशमी एहसास से
कि रहा है यह परिवेश
मेरे उत्कट भावों का उद्‌गम।

इस बार प्रिये !

न प्रेम की चितवन
न अदा मोहब्बत की
न वचन प्रेम के
न परवाह प्यार की,
कुछ भी तो
दिया न तुमने,
मेरे दिल को
छुआ न तुमने,
इस बार प्रिये !

आज भी

आज भी
तुम्हारे चेहरे का जादू
चलता है मुझ पर।
आज भी
तुम्हारे पास
जाता हूँ भूल
सारी दुनिया,
और होता हूँ मुक्त
फितूरो से।
आज भी
लगता है मुझे–
तुम हो
दुनिया की
सबसे खूबसूरत
सबसे अच्छी
अनोखी औरत।

अद्‌भुत है आज

ये रूप
ये यौवन
ये साडी
ये अदा
अद्‌भुत है आज।
इनकी स्मृति
रहेगी अद्‌भुत
तब भी
जब छीन लेगा काल
यह सब तुमसे।

ट्रेन का सफर

ट्रेन का सफर।
सामने मेरे
साँवला चेहरा
सुन्दर, मासूम।
साँवला मौसम
बरसता रिमझिम।
सुखद, मधुर
छूती हवा।
मन रोमानी
रचता कविता।

किन्तु कब तक

कल्पना के
पर लगाके
कटु यथार्थ
की धरा से
विहग–से हम
उड तो चले,
किन्तु कब तक
हम उडेंगे ?

सुविधा

सुविधा के
भोग से
पैदा आदत
सुविधा के
जरा भी छिनते
करती मन
अव्यवस्थित।

रहस्य का खोल

उसे
खूब देखो
खूब देखो,
फिर
रहस्य का खोल
जिसमें
लिपटी हुई वो
खुद ही
उतर जायेगा।

आ

खुश कहाँ फूल ?

फूल खुश
तुम्हारी गोद मे,
या मूर्ति के
शीश पे,
या कि अपनी
पौध—माँ की
गोद में ?

भय-मुक्ति

कितने भय
दबा देते हम
उमगते।

इससे क्या
छूटेगा पिण्ड उनसे ?

उनसे छूटेगा पिण्ड तभी
जब उमगेंगे वे
निर्बाध
विकसेंगे वे
निर्बाध।

अक्सर ही नियम टूटता है

फूल कली,
फिर खिलता,
फिर मुरझाकर
चू जाता।
निसर्ग का नियम
यही है।

ऐसे ही,
भाव उमगता,
फिर खिलता,
फिर मर जाता।
मन का नियम
यही है।

लेकिन जब
नियम टूटता है
विकृति होती है।
और देखने मे
आता है यही
कि अक्सर ही
नियम टूटता है।

शख्सीयत

आत्मा अमर है
या मरणधर्मा
मैं जानता नहीं।
लेकिन,
मैं जानता जरूर
कि जो शख्सीयत है
मेरी इस जिन्दगी की
वो फिर
होने की नहीं।

चेहरे

कितने चेहरे
अक्सर दिखते,
फिर भी
याद न आते।
पर कुछ चेहरे
एक बार ही दिखते,
फिर भी उनको
भूल न पाते।

पलँगों के बीच

मेरे और तुम्हारे
पलॅगों के बीच
है छह फीट की दूरी।
तुम तडप रहे हो
इस दूरी को
दूर करने को,
जबकि मैं हूॅ मधुरिम
इस एहसास से
कि आज की रात
तुम हो
मेरे इतने करीब।

पुष्प-चतुष्टय

छाई है बदली।
छाया में बैठे
देख रहे हैं
सफेद फूलो का
एक चतुष्टय,
लेकिन,
नहीं अघा रहे हैं।

ईसा की बात

ईसा ने कहा –
खुद की तरह
करो प्यार
अपने पडोसी को।

ईसा की बात
है महत्त उपदेश,
नहीं तथ्य का बयान।

जरा देखो तो --
कितना जलते हैं
घृणा करते हैं
अपने पड़ोसी से हम !

इसे तोड़ती थी

हो चुकी थी
तगड़ी बारिश,
छा गयी थी
नीरवता घनी।
इसे तोडती थी
मेढकों की टर्र
झींगुरो की तान।

मौसमों के

मौसमो के
अपने मजे
अपनी सजायें।
मजे तो
हम सहज लूटें,
सजाये
कौन भोगे ?

पल-पल थिरकन

विचर रहा हूँ
हरे-भरे खेतो
बागो के बीच
अपने गॉव के बाहर।
आसमान मे है
सघन श्याम घन,
और बहे
मधु मन्द पवन।
होती पल-पल
मेरे मन
क्या थिरकन !

उसने कहा था

था यौवन उसका
पौष मे
अधखिली कली
गुलाब की।

ऐसे सुन्दर यौवन से
एक दिवस वह
मनमाना खेल रहा था।
तभी कहा था उसने –
भूल न जाना मुझको !

साथ

मेरे बेटे !
अब तुम हुए बड़े।
पहले तुम
जितना चाहा करते थे
मेरा साथ,
उतना
नहीं दिया करता था
तुमको।
अब मैं
जितना चाहता
तुम्हारा साथ,
उतना
नहीं दिया करते हो
मुझको !

स्पर्श

अपने को
छूने को
तुमने ही
दिया था
हमे संकेत
सुनाकर
एक घटना।

था एक सुख कभी

जाडे मे
गुदगुदे बिस्तर पर लेटकर
सिर से पाँव तक
रजाई ओढकर
गरम घोसले का निर्माण करना
था मेरा
एक सुख कभी।
फिर अपने
गरम घोंसले में
ख्वाबों की दुनिया में सैर करना
था मेरा
एक सुख कभी।

व्यथा आगत की

गत की
मीठी यादें
अनागत के
ख्वाब सुनहरे
व्यथा आगत की
कम करने के
नहीं क्या साधन आम ?

रोजी

महानगर के
प्रमुख चौराहे पर
पेशाबखाना
बहुत व्यस्त
बहुत बदबूदार।
उसी के बिल्कुल पास
बैठते मोची
कमाते रोजी !

थी वही, अच्छाई

सुबह आँख खुली,
सुनायी पडी
बाँसुरी की
सुरीली आवाज
बडी सुहानी।
सोचा –
आज का दिन
होगा अच्छा,
लेकिन
निकला नहीं दिन
अच्छा।
बाद मे सोचा –
उस समय
उस आवाज को सुनकर
मन हुआ था जो मधुर,
थी वही, अच्छाई
आज के दिन की।

समर्पण

चाचा मर गये,
तो कर दी समर्पित
उन्हे अपनी नयी पुस्तक,
किन्तु उनके जीते
न कर सके
उनसे प्रेम।

बह निकले आँसू

बेटे के
गुपचुप काम से
हुआ उस पर सन्देह,
आया क्रोध,
हुई तकलीफ।
लेकिन जब
मालूम हुई असलियत,
तो जानकर उसका त्याग
बह निकले मेरे ऑसू।

दुगनी खुशी

बहुत दिनों के बाद
आजी को मिला देखने को
अपना किशोर नाती।

उन्होंने उसमे देखा
अपना किशोर बेटा भी।

चमक उठीं उनकी ऑखें
दुगनी खुशी के अश्को से।

वर्तमान – 1

वर्तमान में
निहित है विचार –
समय का थमना।
लेकिन,
समय थमता नहीं,
क्योंकि मन
थमता नहीं।
अगर थमे मन,
तो थमे समय।
अत वर्तमान
है मन का थमना।

वर्तमान – 2

वर्तमान
छोटी–से–छोटी
अदृश्य रस्सी,
जिसका एक छोर
भूत से बॅधा,
दूसरा छोर
भविष्य से बॅधा।

आशीष

तुम सफर पर
जा रहे हो,
हम तुम्हे क्या
दे आशीष,
जबकि
हमारा मूक मन
असीसता है
हरदम तुम्हें।

सावन

बन्द घर से
आओ चलें
सावन मे
घूमने
हरीतिमा से
भेंटने
शीतल पवन को
चूमने
श्याम घन को
देखने।

पलक झपकते

पलक झपकते
उसका गला कटा,
जिसने
धीरे–धीरे
कैसे–कैसे
अपने तन को
बलवान बनाया।

शादी के बाद

शादी के बाद
ससुराल से लौटने पर
मैंने पूछा था तुमसे –
मेरी याद आती थी ?
तुमने कहा था –
बहोऽऽत।
तुम्हारा वो
अकेला शब्द,
तुम्हारी वो भीतरी आवाज
मैं भूल नहीं पाया हूँ

मरे नाम को

रोटी
कपड़ा
मकान
बीवी--बच्चे
मुकम्मल मेरे पास,
फिर भी
रिक्त मन
मरे नाम को
ढलती उम्र में।

वर्तमान

वर्तमान क्या ?
भूत--भविष्य की
दो रेखाओं का
मिलन--बिन्दु।
भूत की रेखा दिखती,
भविष्य की रेखा भी दिखती।
लेकिन क्या दिखता
दोनों का मिलन--बिन्दु ?
वो क्या दिखे,
वो तो मिला
दोनो रेखाओं में।

त्यौहार

मन हो
पैसा हो
तब हो
पूरा त्यौहार।
मन है,
नहीं है पैसा,
तब
अधूरा त्यौहार।
पैसा है,
नहीं है मन,
तब भी
अधूरा त्यौहार।

अहम् का परदा

अहम् का परदा
उठाने में
कष्टकारक है
कितना,
लेकिन
उठ जाने पर
कष्टनिवारक है
कितना।

चिड़िया

तुम सोचते हो –
चिड़िया
कितनी बुद्धिहीन है,
कितनी कमजोर है,
कितनी अल्पजीवी है।
लेकिन,
क्या कभी सोचा है –
कितनी स्वाभाविक है
उसकी जिन्दगी,
कितनी आजाद है
उसकी तबीयत,
कितना भारहीन है
उसका मन,
और कितनी बेखौफ है
अपनी मौत से वो ?

उपहार

दूर होकर
तुम हमें
अश्रु की
सौगात देतीं।
पास होकर
तुम हमे
क्रोध का
उपहार देतीं।

प्रवासी पूत !

प्रवासी पूत !
सप्ताह भर
घर रहकर
तुम आज
वापस गये।
तुम्हारी माँ
रात मे
खाने को बैठी
तो रो उठी कहते हुए –
मुझसे खाया नहीं जाता,
आज है रविवार
क्या पता
'आलोक' का मेस बन्द हो
क्या पता
उसने
कुछ खाया न हो
यूँ ही सो गया हो।

त्यौहारों की रस्में

त्यौहारों की रस्मे
मनबहलाव का
अच्छा साधन,
हालाँकि
नहीं रहीं वे
अब जीवन्त
और खो चुकी है
अपने अर्थ।

प्रेम

प्रेम हमें
कभी लगा
कूप–सा गहरा,
और कभी
नहर–सा उथला,
कभी लगा
हरा मैदान,
और कभी
सूखा खेत;
कभी लगा
फूलों का हार,
और कभी
काँटों की माला;
कभी लगा
हिम–मण्डित पर्वत,
और कभी
सूखी चट्टान,
कभी लगा
सावनी हवा,
और कभी
जेठ की लू।

मॉ

मॉ ।
जब तुम रहती हो दूर
तुम्हे बहुत याद करता हूँ
कभी रोकर
कभी मुस्कराकर
लेकिन
जब तुम रहती हो साथ
सह नहीं पाता तुम्हे
दे नहीं पाता वह प्यार
उमडता रहता है जो
मेरे दिल मे
रहती हो जब
तुम दूर
क्योंकि
तुम नहीं रह पाती मेरे संग
उस ढग से
जैसे मैं चाहता हूँ
और इससे
किये रहती हो गरम
तुम मेरा मन
जो वास्तव में
तुम्हारे लिए
है कोमल
बहुत कोमल
जिसके तहखाने मे जमा हैं

तमाम, तमाम
प्रेमिल अनुभूतियाँ
अनुभूतियाँ
जिनकी हो तुम जननी
और जिनकी जननी
केवल तुम ही
हो सकती हो।

भूल जाती हूँ

तुम्हारी अनुपस्थिति में
सोचती रहती हूँ –
तुम्हारे आने पर
यह कहूँगी
वह कहूँगी
लेकिन
जब तुम आते हो
बहुत कुछ
भूल जाती हूँ।

कैसे दिन

अस्पताल
डॉक्टर
जॉचे
दवाइयॉ
बीमारियॉ
मौतें –
ये ही बाते
बसी है
इन दिनो
दिमाग मे।

सॉझ ढली है

सॉझ ढली है।
खेत हरे
और पके
खामोश बहुत हैं।
बिजली के तारों पर बैठी
दो चिडियॉ
अचानक चहक उठी हैं।
है बादल कुछ श्यामल
और कुछ लाल
आसमान मे।
तनहा तारा सुन्दर
अति चमकीला,
अभिराम चन्द्रमा
हॅसिया–सा
आसमान में।

आँखों में चमक

धडकते दिल से
खटखटाया उसने
उसका दरवाजा।
खुला दरवाजा,
सामने खडी थी वो।
उसने देखी चमक
उसकी आँखो मे।

उधेड़बुन क्यों !

अभी नहीं कर रहा
ये काम।
भविष्य में करूँगा
या नहीं
इसकी अभी से
उधेडबुन क्यों !
क्या पता
किस करवट बैठे ऊँट !

चुभन

अनैतिक कर्म
करते रहने पर
होती रहती है जो
मन्द–मन्द चुभन
आत्म–सूचिका की,
धीरे–धीरे
वो हो जाती है सुन्न
करते रहने पर
अनसुनी चुभन की।

परिणाम

जो काम बिगडे
आज मेरे
क्या परिणाम थे वे
इस बात के
कि आज पहले
उसका दिल दुःखाया
जिसका कि हूँ मैं प्रिय ?

डर

दिन मे डरे
स्वचेतन मन से,
रात में डरे
अचेतन मन से।
डर तो उनका
पिण्ड न छोडे
दिन और रात।

रस का स्रोत

जब तक
चतुर्दिक जीवन से
जुडा रहा,
रस का स्रोत
भरा रहा,
लेकिन
ज्यो–ज्यों
चतुर्दिक जीवन से
कटता गया,
रस का स्रोत
सूखता गया।

कुछ खास

जिनके लिए
कभी
डरा करते थे
आखिर
जब वे चले गये
हमें लगा
खास कुछ
हुआ नहीं।

जिन्दगी का मकसद

हर आदमी का
अपना विशिष्ट फन होता है,
जो पहले से
उसे दिया होता है।
अपने इस फन को पहचानना,
और पहचानकर
इसके मुताबिक जीना,
यही है असली मकसद
जिन्दगी का।

दुर्गा का चित्र

महिमा
अर्थवत्ता
आत्मीयता
दे दी है
देवी दुर्गा के
भव्य, सुन्दर चित्र को
हमारे परिवार ने
दशको इसे
पूजकर
मानकर।

अपशब्द

पीठ पीछे
दूसरो को
अपशब्द कह
हम लेते मजे।
किन्तु,
क्या हम चाहते
कहे हमें
दूसरे, अपशब्द
पीठ पीछे ?

वो बूढ़ा

दिसम्बर की
ठण्डी शाम,
वो बूढा
पहने गन्दी
सूती गजी
और फटी लुंगी
तोडे गिट्टी
तोडता जाये गिट्टी।

नहीं है जिन्दगी, जिन्दगी

अनुभूति
चेतना की
स्वाभाविक क्रिया है
यह तो
होती ही रहती है
क्योंकि
इसे तो होना ही है
यह कोई खास बात नहीं
खास बात तो यह है
रम पाऊँ अनुभूतियों मे
लेकिन
यही तो हो नहीं पाता
इसी के लिए तो
तरसता हूँ
अकुलाता हूँ
यही नहीं होने से
नहीं है जिन्दगी, जिन्दगी।

झोली हल्की हो जायेगी

तुम्हारे मन की झोली मे
हैं कितने
व्यस्तता और
जल्दबाजी के सिक्के।
इसमे रख लो
कुछ सोने के सिक्के
प्रसून–दर्शन के।
तुम्हारी झोली
कुछ हल्की
हो जायेगी।

लगा गरम लहू

ठण्ड मे
रजाई मे
घुसे तुम
गरमा रहे हो।
इस गरम
सुख के सृजन में,
सोचो जरा,
कितनो का लगा
गरम लहू।

सच झुके

देख मूरत
सिर झुकाया,
तो क्या झुके।
ईश के प्रति
सिर झुका हो
हर वक्त ही,
तो सच झुके।

अच्छा कार्य

किसी के लिए
किया कोई कार्य
आपको
अच्छा लगा
उसको
अच्छा लगा
सच मानिये
अच्छा वो कार्य।

बहने लगा वर्तमान

शहर से आये
अपने गॉव
दो दिन को।

गॉव के बाहर
खेतो, बागों में
घूमने निकले।

लेकिन वहॉ
उमडने लगा
अतीत का सैलाब,
उसमें बहने लगा
वर्तमान।

वेषमता

तुम्हारे पास
इफरात ईंधन
जलाते जो
अलाव में
तापने को,
और वो
शीत खाती
बीनती ईंधन
घण्टों, बगीचो मे
चूल्हा जलाने को।

फोकट का अवकाश

उनके यहाँ
आज नहीं अवकाश,
न ही उन्होने
लिया अवकाश,
फिर भी,
आज वे
मना रहे अवकाश,
और फोकट के
गलत अवकाश पे
फूले नहीं समा रहे !

वाह री कमायी !

कार्ड पचकर
भग आये
कारखाने से
और आकर
खोली दूकान।

कारखाने में तो
बन ही रहा है पैसा,
दूकान मे
बना रहे हैं पैसा ।

उमर बढ़ने पर

उमर बढने पर
बढती हताशा
कुछ खास
न कर पाने की,
नाम
न कर पाने की।
लिहाजा मन
रहता निराश, अशान्त
और उदास।

शब्दों का वजन

उनके
उन शब्दो का वजन
मैंने नहीं किया महसूस
तब
जब वे
कहे गये थे।
बहुत बाद मे
अचानक
महसूस कर
उनका वजन,
मैं रो पड़ा।

सिर्फ मधुरिमा

घटी थी
वो घटना
कुछ दिन पहले।
थी मधुरिम
वो घटना,
लेकिन
थी कुछ
कड़ुवाहट भी उसमें।

कुछ दिन बाद
आयी याद
वो घटना,
लेकिन
आयी याद
सिर्फ मधुरिमा।

आतंकवादी हादसा

आतंकवादी हादसे की
खराब खबर
पढकर या सुनकर
मैं काँप उठता हूँ सोचकर
कब कहाँ रुक जाय
साँस का यह सफर
बिलकुल अचानक।

बम का धमाका

बडे जतन से
पाली–पोसी काया
पलक झपकते
छितरायी
कॉच की नाईं
टुकडो में
आतंकी बम के
एक धमाके मे।

सिर्फ दो पल

माना कि तुम
जल्दी मे हो।
फिर भी,
नहीं इतनी जल्दी मे हो
कि दे नहीं सकते
सिर्फ दो पल
इस सुन्दर
गुलाब को।

फिर क्यों ?

आपका
उससे
वैर नहीं।
आपका
उससे
द्वेष नहीं।
आपके मार्ग मे नहीं है
वो किसी प्रकार भी बाधक।
वो तो है आपका
एक इंसानी बिरादर।
फिर क्यों
बम मारकर आपने
कर दिया उसे
क्षत–विक्षत ?

बीतने को है वर्ष

हम
उनकी
रोज ही
करते प्रतीक्षा।
दिवस
बीतते गये,
मास
बीतते गये,
और अब
बीतने को है
वर्ष।

पुलक-भरी अनुभूति

लड़कपन में
मेरे लिए
बना दिया था
आदमी का चित्र
मेरे गॉव के
एक शिक्षित युवक ने।

मैं देख–देख वह चित्र
हुआ था पुलकित
कई दिनो तक।

तीसाधिक साल बीत गये है,
लेकिन नहीं भूल पाया हूॅ
अपने बचपन का वह चित्र,
न ही वह अपना प्राचीन पुलक।

देखा करता हूॅ
एक–से–एक
उम्दा मैं चित्र,
लेकिन,
नहीं होती है अब
वैसी पुलक–भरी अनुभूति।

न मिल सका दिल से

कितने दिनों तक
की उनकी
कितनी प्रतीक्षा।
आखिर
जब वे आये,
दिल से
न मिल सका
उनसे।

उन्मुक्त कहाँ है मन

इच्छाओ ने
जकडा मन।
चिन्ताओ ने
पकडा मन।
उन्मुक्त कहाँ है मन
जो महसूसे
कोमल कोंपल
और कोकिल की कूक।

समग्र दर्शन

सुन्दरता
देखना चाहो,
कुरूपता
न देखना चाहो।
होगा किस तरह तब
जीवन का
समग्र दर्शन ?

सिन्दूर

पश्चिम नभ में
नयनाभिराम
स्वर्णिम सिन्दूर की
विपुल राशि
बिखेर दी
दिनकर ने
अपनी प्रियतमा
धरती की खातिर
विदा–वेला में'

अच्छाई-बुराई

बुराई की तरफ
हम यो झुकें,
ज्यो नीचे झुके
कोई युवा।
अच्छाई की तरफ
हम यो झुकें,
ज्यों नीचे झुके
कोई बूढ़ा।

जालिम कैद

साथ
रहते आये हैं,
फिर भी
न पहुँचे
तुम तलक ;
जालिम कैद
चाहो की
हमको
जो मिली है।

असुरक्षा

पडोसियो से
खास कोई
सम्बन्ध नहीं,
ईश्वर मे
मददगार के रूप में
विश्वास नहीं,
अतएव,
रहता हूँ पीडित
असुरक्षा के डर से।

आशा-निराशा

घोर निराशा से
मन का एकदम
गिरना देखा,
फिर धीरे–धीरे
आशा–बल से
मन का उठते
जाना देखा।

इशारे

जुदाई के वक्त
मैंने तुम्हे
देखा भर,
और तुमने
मुझे देखते
सिर को
एक तरफ
झुकाया भर,
क्योंकि
खड़ा था
हम दोनो के बीच
कड़ा चौकीदार ,
लेकिन,
ये इशारे ही
बहुत कुछ
कह गये,
बहुत कुछ
समझा गये।

मैं हूँ अपनी कविता

मैं हूँ
अपनी कविता
अधिकतर
भाव—विचार के
स्तर पर,
कमतर
कर्म के
स्तर पर।

भ्रम-भ्रंश

भ्रम–भ्रंश
मन पर
चलाये छुरी
कुछ काल तक,
किन्तु फिर
मन–मंगल करे
चिर काल तक।

तीन स्थितियाँ

नदी में
नौका–विहार
टी.वी. पर देखा।
नदी में
नौका–विहार
सच में देखा।
नदी में
नौका–विहार
खुद को करते देखा।

गोश्त

बकरे का गला
लगभग आधा
कटा पड़ा है,
खून से लथपथ
गला पड़ा है,
आँखें उसकी
टँगी हुई हैं
और धड़ उसका
निश्चेष्ट पड़ा है,
पास में उसके
खड़े हैं ग्राहक
बाते करते
हँसते जाते
इन्तजार में
कि बिक्री को
हो तैयार
उसका गोश्त।

पर प्रेम नहीं करता हूँ

तुम्हारे गुणों की
करता हूँ कद्र,
तुम्हारी वजह से
जो आराम है मुझे,
सुविधायें हैं
जो मुझे,
और है
मेरी जो हिफाजत,
हूँ कायल
इस सबका,
पर प्रेम
नहीं करता हूँ तुमसे।

जीते देख

ढलती उमर में
बहुत कुछ
जीने में
हो गये
असमर्थ।
वह सब
जीते देख
अपने तनय को
लगता है अच्छा।

अतीत – 1

अतीत तो
बीत जाता है
सभी का।
मगर
भूल पाते हैं
कितने
अपना अतीत।

अतीत – 2

अतीत
बहुत
बिसरा।
खालीपन
मन में
बहुत
उतरा।

अतीत – 3

अतीत
दुलराता है,
उमर जब
ढलती है।
लेकिन
मैं तो
अतीत को
बहुत
भूल बैठा हूँ

मिट्टी के खिलौने

कभी मिट्टी के खिलौने
कितना थे लुभाते,
कितना थे रिझाते,
किन्तु अब
बदली बात ही,
क्योंकि मन के
बदले हाल ही।

अपनी-अपनी दुनिया

तुम
अपने से ही तो
मापते हो
दुनिया को।
मैं
अपने से ही तो
मापता हूँ
दुनिया को।
तुम्हारी–मेरी
अपनी–अपनी
दुनिया है।

आज !

अमीर
विचार के
गरीब
भाव के
दिखते
कितने
आज !

पचास की उम्र में

कल्पना के विहग की उड़ान
हुई है कम।
श्रम पालने की क्रिया में भी
हुई है अवनति।
निस्सारता का बोध
बढने लगा है अब।
कामनायें भी अब
होने लगी हैं कम।
राग–द्वेष के वेग
हो रहे हैं मन्द।
वासना का आतप भी
अब होने लगा है मन्द।
जिन्दगी की भागदौड
हुई है उतार में।
और व्यस्तता
हुई है अधोमुखी।

सास-बहू

बात अनबन की
सास—बहू की
बडी पुरानी।
नहीं सुहाती
बहू सास को।
पराया खून
परायी बेटी।
नहीं बात है
इतनी भर ही।
बहू छीनती
सास से बेटा।
इसलिए डाह भी
सास को होती।

भूकम्प

आया कहीं भूकम्प,
बन जाता है दर्द की दास्तान
युग—युगों तक।
अन्यत्र
उस भूकम्प की बातें
कही—सुनी जाती हैं चाव से
युग—युगों तक

प्रतीक्षा

बहुत दिनो से
नहीं आ रहे थे तुम।

होली की राह
देख रही थी।
शायद आओ होली मे।

होली बीत गयी,
पर आये नहीं तुम।

धार्मिकता

अपनी उत्कट कामना की पूर्ति हेतु
जाता था बेटा
हनुमान–मन्दिर
हर मंगलवार
और रहता था
उस दिन व्रत।

कामना उसकी
हुई नहीं पूरी,
अविच्छिन्न
धार्मिक कर्म ये उसके
हुए फौरन विच्छिन्न।

शेर-दिल !

कमजोर के
इल्जाम से
अपमान पाकर
आवेग में
उसने उठाया
इक कदम
शेर–दिल का !

ऊँचा पद

प्रतिष्ठित हो
ऊँचे पद पर।
ऊँचे पद का मद
दुलराता होगा मन।
लेकिन,
मन में उठेगे
सुन्दर भाव तब,
पूरे करोगे जब
पद से जुड़े दायित्व।

मतलब

ओह !
वह औरत
उस औरत को
कितनी मिठास से पुकारती · 'अम्माँ'।

भ्रमित न हों
उसकी बोली से,
हुई है वो शरबती
मतलब से।

अनागत वीरान होता

आशाये
योजनायें
कल्पनाये
यदि न होतीं,
तो अनागत
चन्द्रमा–सा
वीरान होता !

शेरबबर का

कद था उसका
छोटा,
देह थी उसकी
दुबली,
लेकिन
दिल था उसका
शेरबबर का।

भटकटैया

भटकटैया के
पौधे को
न कोई
सींचता है,
न कोई
उसकी
देखभाल करता है,
फिर भी,
खिलते हैं उसमें
सुन्दर फूल।

खाली होता जाय

यदि विचार से मन
खाली होता जाय –
तो हल्का
होता जाय,
स्वतन्त्र
होता जाय,
स्थिर
होता जाय,
शान्त, आनन्दित
होता जाय।

क्या-क्या उपाय

ऊब, निराशा
और हताशा,
घबराहट, चिन्ता
औ' आशंका
आदिम रिपु हैं
मानव–मन के।
इनसे लडने को
मानव ने ढूँढ़े
क्या–क्या उपाय,
मसलन,
उत्सव, पर्व
सभा, सम्मेलन
गोष्ठी, आयोजन।

हे आतंकवादी बन्धु !

हे आतंकवादी बन्धु !
क्यों ले लेते हो
निर्ममता से जान
अपने ही बन्धु की,
नहीं होता जो
तुम्हारे प्रति
किसी भी तरह
गुनाहगार,
नहीं बिगाडा जिसने
कुछ भी तुम्हारा,
नहीं है जो
तुम्हारे मार्ग का कण्टक,
नहीं है जो
तुम्हारे भावों का दुश्मन,
नहीं है जो
तुम्हारे विचारों का विरोधी,
नहीं है जो
तुम्हारे संकल्पों का अवरोधी ?

तुम्हारी ही तरह तो
वह भी है,
उसके भी तो
तुम्हारी ही तरह
हैं दिल, दिमाग, देह।
तुम्हारी ही तरह
है उसके भी

क्या तुम चाहोगे कभी –
कोई छीने तुम्हें
इन सबसे ?

जरा करो तो विचार–
इस तरह
मारकर किसी को
कितना बड़ा गुनाह
कर रहे हो तुम !
क्या इससे भी बडा गुनाह
हो सकता है कोई ?

मेरे भाई !
बुद्ध और ईसा की करुणा
कर रही है तुमसे गुहार
बख्शने की जान
तुम्हारे ही बडे परिवार के
एक निर्दोष भाई की,
एक मूल्यवान भाई की।

फिर भी

एक
फूल–सा है,
दूसरा
काँटा सरीखा।
फिर भी
उन्हें है
साथ रहना

सुघड़ता

उनके जीवन की गति
नहीं है तेज,
पर उनके क्रिया–कलाप
लिये हैं लय
सितार की
और कला
प्रतिमा की।

सधे हाथों से

उनकी साँसें
रहतीं सन्तुलित
योगी की तरह।
तभी तो,
वे करते
अपने दैनिक कर्म
कलाकार के–से
सधे हाथों से।

अनुभूतियाँ

बचपन की
मधुपर्की
कुसुमी
रेशमी
अनुभूतियाँ
आ जातीं
कभी हल्के–से याद
लाते स्मिति
आह–सम्मिश्रित
जब घूमते हम
खेतो, बागों मे।

फर्क

चलते
देखने से
खडे होकर
देखने में
फर्क होता।
खड़े होकर
देखने से
बैठकर
देखने में
फर्क होता

बिना ताजमहल

कितनों का प्रेम
रहा होगा
अधिक गम्भीर
मुमताज–शाहजहाँ से,
लेकिन,
उन्हें जानता कौन
बिना ताजमहल !

छोटी चिड़िया

नींबू के
छोटे दरख्त की
शीतल छाया में बैठी
छोटी काली चिड़िया
ले रही आनन्द
मन्द पवन का
बची धूप के
आतप से।

लगते हैं अच्छे

हम नहीं चाहते हैं
परीक्षा में
किसी को
अधिक अंक देना,
क्योंकि
इसे हम
मानते हैं अन्याय।

उन्होंने
हमारी बेटी को
दिया अधिक अंक
परीक्षा में,
हालाँकि
हमने उनसे
कहा नहीं था
कुछ भी
इस विषय में।
पर अधिक अंक दे देने से
लगते हैं वे
हमे अच्छे।

उपकार

अन्य का
अन्याय से
उपकार करना
नहीं चाहते हम,
मगर
अन्य से
अन्याय से
उपकार अपना
चाहते हम।

मैला

देख मैला
तुम घिनाते
और हटते
फौरन वहाँ से,
पर मैला वही
ढोता है कोई !

जिन्हें पढ़ता हूँ रुचि के साथ

मेरे पास पडी हैं
तमाम पत्रिकायें
जिनमे हैं
तमाम कविताये
अनपढी,
लेकिन,
मैं उन्हे पलटता नहीं
पढने को कवितायें।

एक शिष्य ने दिये
मुझे कुछ पुराने
साप्ताहिक परिशिष्ट
एक अखबार के।

इनमें हैं छपी
कुछ कवितायें,
जिन्हें मैं पढता हूॅ
रुचि के साथ।

चिडिया-सा

चिड़िया--सी
नन्हीं जान
होता बच्चा।
चिड़िया--सा
मासूम
होता बच्चा।
चिड़िया--सा
गतिशील
होता बच्चा।
चिड़िया--सा
आजाद
होता बच्चा।

चिड़ियाँ

क्या रूप--रंग
चिड़ियों के होते !
क्या आवाजें
चिड़ियों की होतीं !
क्या हाव--भाव
चिड़ियों के होते !
क्या क्रिया--कलाप
चिड़ियों के होते !

आगन्तुक चिड़ियों से

मेरे कमरे की पिछली खिडकी के सामने
कई पेड है।
दिन भर रहते हैं वे आबाद
तरह–तरह की चिडियो से।
इस खिडकी के सामने बैठकर
पढते–लिखते समय
पाता हूँ क्या मजा
आगन्तुक चिडियों से।

अजब

विज्ञान ने
तरक्कियॉ
कीं अजब,
लेकिन
गिरावट
आदमी की
हुई भी अजब ।

अहम

मुड़कर देखता हूं
जब अपनी जिन्दगी को
तो होता है विस्मय —
अनगिनत बातें
थीं जो कभी अहम
नहीं हैं अब
बिल्कुल अहम !

उन्नतियाँ

विज्ञान के युग में,
बुद्धि–तर्क के युग में,
मानव ने की
बहुत उन्नतियाँ–
मसलन,
हो गया वह
अधिक जातिवादी,
अधिक सम्प्रदायवादी,
अधिक क्षेत्रवादी !

वसुधा ही कुटुम्ब है

वन में था
ऋषि का आश्रम।
भार्या, शिष्य, अपत्य
थे ऋषि के सहवासी।
पशु, पादप, पक्षी भी
थे ऋषि के सहवासी।
तभी वहाँ
देखा था ऋषि ने –
वसुधा ही कुटुम्ब है।

तोड़ा एक फूल

उसने
मेरे पेड से
प्यार से तोडा
एक फूल,
और मुझको देखकर
संकोच में
मुस्कराकर
वह बढ गयी

□□□

रमेशकुमार त्रिपाठी

जन्म . 1 दिसम्बर, 1942 को उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले के मुबारकपुर गॉव मे।

शिक्षा : एम ए (दर्शनशास्त्र), पीएच डी।

प्रकाशित काव्य-कृतियॉ :
हाइकू कविताओ के दो सकलन **मन के बोल** (1989) और **अनुभूति-कलश** (1995)। एक कविता–सग्रह – **मेरे द्वार तरु नीम का** (1998)।

सम्प्रति : महात्मा गॉधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी के दर्शनशास्त्र–विभाग के आचार्य तथा अध्यक्ष।

निवास 5, नन्दनगर, बी एच यू, वाराणसी – 5